ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218
PP. No.- 62-65
ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-17, No.- I, Issues-31, YEAR- Jan.-March-2024

1857 का विद्रोह और पूर्वांचल

डॉ0 अमित कुमार सिंह
असिस्टेन्ट प्रोफेसर– इतिहास विभाग, डी0ए0वी0पी0जी0 कालेज आजमगढ़ (उ0प्र0), भारत

Received-12.01.2024, Revised-20.01.2024, Accepted-26.01.2024 E-mail: amitsingh@gmail.com

***सारांशः** वर्तमान में जिसे पूर्वांचल कहते हैं, वह मुगल सूबा इलाहाबाद और अवध का भाग था, जिसमें आइन–ए अकबरी के अनुसार, विभिन्न प्रकार के फल–फूल, उद्यान और वनस्पतियों की प्रचुरता है और इसमें प्रचुर मात्रा में तरबूज–खरबूज और अंगूरों की आपूर्ति होती है। कृषि कार्य अपने उत्कर्ष पर था और इस क्षेत्र में उच्चकोटि का चावल पैदा होता है जो अपनी सफेदी, सुगंध और स्वाद में अतुलनीय है। बुनकर और दस्तकार अपने काम में बहुत कुशल थे और उच्चकोटि के वस्त्रों का उत्पादन करते थें। बनारस, जलालाबाद तथा मऊ में उच्च गुणवत्ता वाले वस्त्रों 'झोल', मिहरकुल का उत्पादन होता था। जौनपुर जफराबाद तथा अन्य स्थानों पर ऊनी कालीनों का निर्माण होता था।[1] अपने उत्पादित कृषि उत्पादन और स्थानीय उत्पादों की प्रचुरता के कारण इस क्षेत्र के निवासी सुखी तथा संतुष्ट थें। इरफान हबीब के अनुसार ''जब किसी गांव में अपना कपड़ा स्वयं बुना जाता हो, बढ़ई, लुहार और कुम्हार ग्रामीणों के लिये आवश्यक सामग्री कपड़ा, बर्तन, हल और कृषि में काम आने वाले अन्य औजार उत्पादित करते हो, जब किसी किसान को अपनी जरूरतों के लिये अपने ग्राम की सीमा से बाहर देखने की कोई आवश्यकता नहीं थें।[2] प्लासी के युद्ध की छाया देश के अन्य भागों में प्रसारित होने, षड़यंत्रों और विजयों द्वारा ब्रिटिशराज, का विस्तार होने तक लगभग पूरे देश की यही स्थिति थी, किन्तु कम्पनी राज में स्थितियॉं बदल गयी थीं। उदाहरण के लिये बंगाल में भारी बेरोजगारी थी और उद्योगों का व्यापक विनाश हुआ था। सियर–उल–मुताखरीन क`लेखक गुलाम हुसैन तबातबाई के अनुसार, ''नयी सरकार के अधीन दस्तकारी उद्योग नष्ट हो गया था और इस प्रकार बेरोजगार कारीगर और दस्तकार चोरी या भिक्षावृत्ति कर रहे थे या आजीविका की तलाश में अपना घर छोड़कर विस्थापित हो रहे थें।''[3] ब्रिटिश कूटनीति और देशी शासकों के साथ संधियों के माध्यम से लगभग पूरा देश ब्रिटिश नियंत्रण में था। एक युद्ध के बाद सिंधिया समर्पण को बाध्य हो गया था।*

कुंजीभूत शब्द– बुनकर, दस्तकार, उच्चकोटि, उच्च गुणवत्ता, कृषि उत्पादन, औजार, षड़यंत्रों, बेरोजगारी, दस्तकारी उद्योग।

व्यवहारिक दृष्टि से पंजाब और अवध को छोड़कर पूरा देश ब्रिटिश नियंत्रण में था। पंजाब के युद्धों (सिख युद्धों) और अवध के विलय के बाद यह कमी भी पूरी हो गयी और अब पूरा भारतीय उपमहाद्वीप ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कम्पनी की कृपा पर था। ब्रिटिश आधिपत्य का दूसरा पक्ष तैयार ब्रिटिश माल के लिये बाजार का निर्माण करना था। ब्रिटिश उत्पादकों के दबाव के कारण 1913 के चार्टर एक्ट द्वारा ईस्ट इंडिया कम्पनी का व्यापारिक एकाधिकार समाप्त कर भारतीय बाजार को ब्रिटिश उत्पादित वस्तुओं के लिये खोल दिया गया।[4] इस के प्रभावों पर टिप्पणी करते हुये एक आधुनिक इतिहासकार का कहना है, कि ''मुक्त व्यापार भारतीय दस्तकारों के निर्माण तथा उत्पादन के लिये विनाशकारी था।[5] इरफान हबीब मार्क्स के 'पूंजी' के उद्धरण से बताते है कि 1833 के बाद भारतीय हथकरघा बुनकरों का सम्पूर्ण अस्तित्व ही समाप्त हो रहा था।[6] लोगों की तकलीफें 1826 के बीच मूल्यों की वृद्धि से और बढ़ गयी जबकि मजदूरी (वेतन) इस बीच या तो वही रही या पुराने के मुकाबले 50 प्रतिशत कम हो गयी थी।[7] अवध के विलय के बाद भी बहुत से बुनकर और दस्तकार बेरोजगार हुये। समकालीन इतिहासकार कमालुद्दीन हैदर अवध के हालात पर चिन्ता व्यक्त करता है।

बुनकरों के बड़े पैमाने पर विस्थापन के कारणों का पता लगाने वाली जॉच के जवाब में लखनऊ के साप्ताहिक 'तिलिस्म' ने 29 अगस्त 1856 को प्रकाशित एक रिपोर्ट में बताया कि अपने उद्योग के विनाश और अपने उत्पादों के ग्राहकों की कमी के कारण मुबारकपुर के बुनकर दूसरों स्थानों पर विस्थापित हो रहे थें। यह स्थिति इस कारण पैदा हुई कि आयातित सामान प्रतिस्पर्द्धा में सस्ती कीमत पर उपलब्ध था।[8] आर्थिक रूप से विपन्न और बेरोजगारी के बावजूद अपने भाग्य की स्थिति से संतुष्ट थें, परन्तु जब ईसाई मिशनरियों के धर्मान्तरण की गतिविधियों और तेज हुई तो उनका क्रोध अपने चरम पर पहुॅच गया।[9] चर्बी लगे कारतूसों का बलातू प्रयोग एक विस्फोटक घटना सिद्ध हुई। पूर्वांचल के एक सैनिक मंगल पाण्डेय ने यह आदेश मानने से इनकार कर अपने जीवन की कुर्बानी दी। भारतीय जन और सिपाहियों के लिये धर्म किसी भी अन्य चीज से अधिक महत्वपूर्ण था। महराजा जंग बहादुर को भेजे गये जनरल रामबख्श और अन्य के प्रतिवेदन में सिपाहियों की यह भावनायें स्पष्ट रूप से प्रतिबिम्बित होती है। सिपाहियों की सेवाओं का उल्लेख करते हुये इनमें कहा गया कि अंग्रेजी की विजयों में हमारे सैकड़ों भारतीय सिपाहियों ने अपने जीवन की कुर्बानी दी परन्तु कभी कोई बहाना नहीं बनाया और न ही विद्रोह किया।[10] लेकिन वर्ष 1957 में अंग्रेजों ने नये कारतूसों के प्रयोग का आदेश दिया, जिसमें गाय और सुअर की चर्बी मिली थी। सिपाहियों ने इस पर आपत्ति कर विद्रोह किया। उन्होंने आगे जोड़ा कि इसके पूर्व भारत में बहुत से शासक हुये लेकिन किसी ने भी हमारे धर्म पर हमला नहीं किया।[11]

बंगाल सेना मुख्यतः ऊॅंची जाति के हिन्दुओं और मुसलमानों द्वारा संगठित थी, जो बहुत धार्मिक थें। जनरल रामबख्श ने महाराजा जंग बहादुर को लिखा, ''यदि हिन्दुओं, मुसलमानों का धर्म नष्ट हो गया तो उनके लिये दुनिया में क्या बचेगा?''[12] स्मरणीय है कि बंगाल सेना की कुल संख्या 139000 थी, जिसमें से लगभग 40 हजार महालवाड़ी राजस्व व्यवस्था वाले क्षेत्रों से थे, जिसका व्यापक विस्तार पूर्वांचल के क्षेत्र में था। इनमें से अधिसंख्य सैनिक भू–स्वामी समुदाय के थें। इस प्रकार बंगाल सेना के सैनिकों के परिवार को अपने घर खर्च के लिये नियमित नकद रकम की आपूर्ति सुनिश्चित थी।

बंगाल सेना के सैनिक दानापुर, बनारस, इलाहाबाद, कानपुर, बरेली आदि स्थानों पर तैनात थें। सिपाही अपने 'ब्रिटिश साम्राज्य

अनुरूपी लेखक / संयुक्त लेखक

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-17, No.- I, Issues-31, YEAR- Jan.-March-2024

के निर्माता' होने की अपनी शकित के प्रति सचेत थें। 10 मई 1857 को मेरठ से 'मार्च' कर 11 मई को दिल्ली पहुंचने के बाद उन्होंने शहर के हिन्दुओं व मुसलमानों को सम्बोधित एक घोषणा प्रसारित की कि अपने धार्मिक विश्वासों की रक्षा के लिये वे लोग आम जनता के साथ संगठित होकर दिल्ली में बादशाही सत्ता स्थापित करें।[13] सिपाहियों का आकस्मिक दिल्ली प्रवेश और उसका अपने पूर्वजों के राज्य में राज्यारोहण इतिहास की परिचित घटनायें है। ध्यातव्य है कि कुछ लोगों द्वारा सिपाहियों को पहले दिन से ही 'पुरबिया' कहा गया और उन्हें झूठे विषाक्त प्रचार का निशाना बनाया गया। दरबार से सम्बन्धित ब्रिटिश एजेन्ट जीवन लाल के अनुसार तो सिपाहियों द्वारा शासक की मर्यादा का लगातार उल्लंघन किया गया और उसे अपमान जनक शब्दों, 'अरे ओ राजा, अरे बुड्ढ़े सुन' तथा उसकी दाढ़ी या हाथ पकड़ कर संबोधित किया गया।[14] एक अन्य दरबारी खानजादा ने सिपाहियों के पहुंचने का अन्य तरीके से वर्णन किया। उसका कहना है कि, सिपाहियों ने बहादुरशाह से मेरठ में अपने विद्रोह के कारणों का वर्णन करते हुये विद्रोह में उसके संरक्षण का आग्रह किया, क्योंकि उन्होंने धर्म के लिये विद्रोह किया था।[15]

सिपाहियों के आने के बाद दिल्ली में अव्यवस्था फैज गयी। ब्रिटिस अधिकारियों की अनुपस्थिति का लाभ उठाकर कुछ असामाजिक तत्व लूटमार में व्यस्त थें।[16] इन तत्वों से नजदीकी का आरोप लगाकर पुरबियों को इस लूटमार के लिये जिम्मेदार बताया गया।[17] लूटमार में पुरबियों की भूमिका से कतई इन्कार भी नहीं किया जा सकता, परंतु पुरबियों को बदनाम करने के लिये इसका सामान्यीकरण नहीं किया जा सकता क्योंकि अधिकारिक या गैर अधिकारिक स्रोतों में उसका कोई साक्ष्य नहीं मिलता। 24 अगस्त 1857 को अपने प्रकाशन में 'दिल्ली अखबार' सूचना देता है कि, 'बहुत से लोग सिपाहियों के वेष में लूट और डकैती में संलग्न थे। उन्होंने अंग्रेजों के घरों से हथियार और बारूद लूटकर सिपाहियों का छद्म वेष धारण कर लोगों को लूटने लगे। उनमें से पांच पकड़े गये। छानबीन से पता लगा कि उनमें से एम0मि0 साइमन का भिश्ती (पानी ढोने वाला) एक अहीर और शेष मोची थें।[18] अपने 12 जुलाई 1857 के अंक में इसने एक रिपोर्ट प्रकाशित की कि 'सिपाहियों के वेष में लूटमार करने वाले पकड़े तथा दंडित किये गये।' इससे स्पष्ट है कि पुरबियों या सिपाहियों की दिल्ली की लूटमार में कोई भूमिका नहीं थी। जहीर देहलवी स्वीकार करते हैं कि, 'पुरबियों को शहर में शांति व्यवस्था स्थापित करने की जिम्मेदारी दी गयी, ताकि बाजार खुले रहें और व्यापारिक गतिविधियॉ सामान्य रूप से चल सके।[19]

विद्रोह के प्रारम्भ से बहुत से उच्च और निम्न स्थिति के लोग अंग्रेजों से मिले हुये थे। उनमें बादशाह के चिकित्सक हकीम अहसानउल्लाह खां भी थे, जिनका घर अंग्रेजों से सहयोग करने के लिये घेर लिया गया था और उसके घर में लूटपाट भी की गयी।[20] सिपाहियों के प्रति जहीर देहलवी की दुर्भावना का पता इन पंक्तियों से लगता है, ''पुरबिया निश्चिन्त भाव से जीवन का आनन्द ले रहे हैं, वे भांग पीते है और लड्डू पूरी खाते हैं। उन्होंने खाना बनाना छोड़ दिया है और वे दोनों समय पूरी कचौरी खाते है और बिना भय के टांगे फैलाकर सोते है।''[21] पुरबियों के प्रति जहीर देहलवी की दुर्भावना सारी सीमायें पार कर जाती है, ज बवह अपने पाठकों को बख्त खान से परिचित कराते हैं, ''एक नाटा, अधेड़, भारी बदन का आदमी, जो मोटे कपड़े का कुर्ता और धोती पहनता है तथा दाढ़ी रखता है। माथे पर अंगोछा बॉधे वह ऐसा लगता था कि सीधे स्नानघर से आ रहा हो, बादशाह के पास आकर सलाम करता है। मेरे सम्बन्धी (ब्रदर–इन–ना) उसे रोकने की नाकाम कोशिश करते हैं। बादशाह का हाथ पकड़ क रवह कहता है ''सुन बुढ़उ हमने तुम्हें बाशा किया।''[22] जहीर देहलवी कहता है कि, ''ऐसे अपमान जनक शब्द सुन उसे बहुत गुस्सा आया। दरबार में उपस्थित लोगों ने उसे ढकेल कर दीवान–ए–खास से निकाला। क्रोधित बादशाह उसे गालियां बकता रहा।'' बाद में जहीर देहलवी को बताया गया कि वह आदमी बरेली का जनरल बख्त खान था। जहीर की धारणा है कि उसकी पोशाक अन्य पुरबिया सिपाहियों की तरफ घसियारे जैसे थी।[23] यहां यह उल्लेख्य है कि जब सिपाहियों ने बहादुरशाह को बादशाह घोषित किया, बख्त खान बरेली में था। उसके अतिरिक्त जीवन लाल का विवरण जहीर देहलवी के दुराग्रह का पर्दाफाश करता है। जीवन लाल हमें बताता है कि 2 जुलाई 1957 को दिल्ली पहुॅचने पर बख्त खान का भव्य स्वागत किया है।[24] और बादशाह ने नवाब अहमद कुली खान को उसके स्वागत का निर्देश दिया। हकीम अहसान उल्ला खान और अन्य दरबारी भी दरबार में उपस्थित थें। बेरली सेना के कमांडर बख्त खान को मुहम्मद कुली खान के साथ सेना की भर्ती के लिये नियुक्त किया गया। बादशाह का आदेश था कि शहर के निवासियों के साथ लूट–पाट न की जाय। बख्त खान ने बादशाह को शहर में शांति व्यवस्था स्थापित रखने का आश्वासन दिया।[25] बादशाह ने मित्रता के प्रतीक के रूप में उसका हाथ थामा और बाद में अकेले में बातचीत की।[26]

13–14 हजार–सिपाहियों के साथ बख्त खान की दिल्ली में उपस्थिति ने शाहजादों को आशंकित किया होगा, जो न तो एकजुट थे न ही संगठित। इसके अतिरिक्त बादशाह द्वारा दिये गये असाधारण अधिकारों ने उसके विरूद्ध षड़यंत्रों की एक अन्तर्धारा को जन्म दिया।[27] बख्त खान के लिये दिल्ली पर नियमंत्रण एक दुरुह काम था जो षड़यंत्रकारियों और जासूसों की पकड़ में थी और जिसका प्रशासन अव्यवस्थित और अराजक था। शाहजादों की ईर्ष्या और षड़यंत्रों ने बख्त खान के नेतृत्व में संघर्षरत सिपाहियों की संघर्ष क्षमता पर भी प्रभाव डाला। यद्यपि उन्होंने अलीपुर सहित कई युद्धों में असाधारण साहस और वीरता का प्रदर्शन किया, परन्तु वे योजनाबद्ध ब्रिटिश आक्रमणों का मुकाबला नहीं कर सके। शहर की सुरक्षा के लिये बख्त खान और पुरबिया सिपाहियों ने अजमेरी दरवाजा तथा दिल्ली दरवाजा के युद्ध में भीषण संघर्ष किया, लेकिन तब तक बहुत देर हो चुकी थी। बख्त खान ने बादहशाह से लखनऊ चलने का आग्रह किया क्योंकि दिल्ली–लखनऊ के बीच का क्षेत्र अभी भी विद्रोहियों के नियंत्रण में था।[28] परन्तु बादशाह के सम्बन्धी तथा सचिव इलाही बख्श ने, जो अंग्रेजों के साथ मिला हुआ था, बख्त खान के प्रयत्नों को असफल कर दिया। निराश बख्त खान अपने सिपाहियों के साथ अवध आ गया और अंग्रेजों से संघर्ष जारी रखा। इस बीच 19 सितम्बर 1957 को अंग्रेजों ने दिल्ली पर अधिकार कर लिया। विद्रोह में पुरबियों की भूमिका का विवरण आरा के वीर राजपूत योद्धा कुॅवर सिंह के उल्लेख के बिना अधूरा रहेगा, जिन्होंने अंग्रेजों को कड़ी चुनौती दी। पड़ोसी राजाओं का सहयोग पाने के लिये अपने भाई अमर सिंह को बूदी के राजा हरदत्त सिंह, कालपी

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-17, No.- I, Issues-31, YEAR- Jan.-March-2024

के राजा महेशचन्द, महोना के दिग्विजय सिंह, शंकर गढ़ के राजा बेनी प्रसाद, दोना खेरी के राम बख्स सिंह, चेहरोल्का के दुर्गा प्रसाद, प्रतापगढ़ के गुलाब सिंह, अहटा के गुलाम सिंह, उन्नाव के चौधरी दाता सिंह, द्वारवारा खेरी के अर्जुन सिंह, तलोई के राजा तौली सिंह, चर्दा बहराइच के जोत सिंह, बांका तुलसीपुर के दान बहादुर शाही, इटावा के उदय प्रताप सिंह, गोंड़ा के देवीबख्श सिंह, मऊ फर्रूखाबाद के राजा लाल सिंह, सुल्तानपुर के मिल्की सामंतों, गोरखपुर नगर के राजा खानजादागण, सतासी, नरहरपुर और शाहपुर के राजा और लखनऊ की बेगम हजरत महल से संपर्क करने का निर्देश दिया।[29]

हम यह बताने की स्थिति में नहीं हैं कि उनमें से किन का और किस सीमा तक समर्थन कुँवर सिंह को मिल सका। बाद की घटनाओं से स्पष्ट हुआ कि उन्हें आरा से कालपी तक जनता का सहयोग अवश्य मिला। यह दुहराना व्यर्थ है कि कुँवर सिंह ने जुलाई 1957 में आरा के निकट अंग्रेजों को पराजित किया, अपनी स्थिति सुदृढ़ करने के बाद अंग्रेजों ने अपने दबाव से कुँवर सिंह को आरा छोड़ने को विवश किया। कुँवर सिंह को पड़ोसी राजपूतों तथा अन्य समूहों से समर्थन मिला। असम बटालियन में सेवारत पुरबिया सिपाहियों ने कुँवर सिंह का सहयोग किया। कुँवर सिंह सम्भवतः बहादुरशाह का सहयोग करने दिल्ली जाना चाहते थे। 24 अगस्त को तेजी से मार्च करते हुये सासाराम होकर वह 26 अगस्त 1957 को मिर्जापुर तथा 29 अगस्त 1957 को बांदा पहुँचें। बांदा से वह रींवा की ओर चले परन्तु वहां के राजा ने विश्वासघात कर उनकी उपस्थिति की सूचना अंग्रेजों को दे दी। राजा का यह दृष्टिकोण देख कर क्रुद्ध हुये सैनिकों को कुंवर सिंह ने अपने मालिक के विरूद्ध हथियार उठाने से मना करने के बाद, रींवा छोड़ दिया।

18 सितम्बर 1857 को दिल्ली के पतन ने भी कुँवर सिंह की रणनीति को प्रभावित किया। यहां से वह कानपुर की ओर बढ़े तथा रास्ते में 50वीं, 92वीं, बटालियन के विद्रोही सिपाही उनसे आ मिले जिनमें से अधिसंख्य पुरबिया थें। कुँवर सिंह नागीद से कालिजर होकर बांदा पहुँचे जहॉ वह पूर्वांचल के सैनिकों की ग्वालियर टुकड़ी से मिले। कुँवर सिंह के नेतृत्व में विद्रोही सिपाहियों ने कानपुर के पास एक मुठभेड़ में जनरल विंउ को बुरी तरह पराजित किया। ब्रिटिश इतिहासकार इस हार को यह कहकर खारिज करते हैं कि जनरल युद्ध क्षेत्र से हट गया। 1 फरवरी तथा 20 फरवरी को अपने न्यूयार्क डेली ट्रिव्यून के डिस्पैच में एंगेल्स ने लिखा "राडान के नायक विढ़म तथा अन्य अधिकारियों जिनके बारे में विख्यात है कि उन्होंने अपनी योग्यता सिंह की है, ने ग्वालियर टुकड़ी के अग्रिम दस्ते को 26 जनवरी 1958 को पराजित किया परन्तु 27 जनवरी को वह उनसे बुरी तरह पराजित हुआ। अब अंग्रेजों ने लगातार कुँवर सिंह का पीछा शुरू किया। जनता के सहयोग से कुँवर सिंह आजमगढ़ पहुंच सके। एक आधुनिक इतिहासकार की राय में वह लोगों का सहयोग प्राप्त करने उत्तरांचल जाना चाहते थे जहाँ अंग्रेजों की उपस्थिति लगभग नहीं थी। अतरौलिया (आजमगढ़) की तरफ बढ़ते हुये अंग्रेजों से उनका सामना हुआ जो उनकी सेनाओं से पराजित हुये। अब अंग्रेजों ने कुँवर सिंह को चारों तरफ से घेरने की योजना बनायी और उनकी गतिविधियों पर जनर रखने और सहयोग के लिये गोरखपुर छपरा, गाजीपुर, जौनपुर की सेना से आग्रह किया। इसके बावजूद कुँवर सिंह एक स्थान से दूसरे स्थान तक जाते रहे। 23 अप्रैल 1958 को आर० डेविस ने बनारस के कमिश्नर को लोगों द्वारा कुँवर सिंह का सहयोग करने की सूचना दी। उन्होंने आजमगढ़ और गाजीपुर में दो युद्ध लड़े। घायल होने और अंग्रेजों द्वारा लगातार नजर रखने के बावजूद गंगा पार करने में सफल हुये, गंगा के दोनों किनारों की जनता ने उनका पूरा सहयोग किया और सिपाहियों को नावें प्रदान की। 23 अप्रैल 1858 को कुँवर सिंह जगदीशपुर में थे जहां उनके नेतृत्व में एक छोटी सी सेना नें ली ग्रांड को पराजित किया। इस युद्ध में 199 अंग्रेज सैनिकों में से केवल 80 जीवित बचें। 23 अप्रैल 1858 को कुँवर सिंह की मृत्यु हो गई।

1858 के स्वाधीनता संग्राम में पुरबियों के योगदान का मूल्यांकन करने के लिये बंगाल सेना के सैनिक दस्तावेजों के आधार पर एक अनुसंधान की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. अबुल फज्ल अल्लामी, आइन–ए–अकबरी खंड 2 (अनु0एच0ए0 जैरेट) नई दिल्ली (1949) पं0 199, 181.
2. इरफान हबीब, द एग्रेरियन सिस्टम आफ मुगल इंडिया 1556–1707 नई दिल्ली (1999) पृ0 67.
3. गुलाब हुसैन, सियर–उल–मुताखरीन नवल किशोर पृ0 837.
4. कार्ल मार्क्स आन इंडिया (सं0 इकबाल हुसैन) नई दिल्ली 2006 पृ0 26–27.
5. रीथिकिंग 1858 (सं0एस0 भट्टाचार्य) नई दिल्ली 2007 पृ0 59.
6. पूर्वोक्त।
7. एक अध्ययन के अनुसार 1826 में मजदूरी 2 रू0 6 आना प्रतिमाह से घटकर 1858 में 1 रू0 14 आना रह गयी। इसी प्रकार नाई, बढ़ई, लुहार, बेलदार की मजदूरी लगभग 60 प्रतिशत कम हो गयी। देखिये ऐटकिन्सन, स्टैटिस्टिकल, डिस्क्रिप्टिव एण्ड हिस्टॉरिकल एकाउण्ट ऑफ नार्थ वेस्टर्न प्राविन्सेज, खण्ड–5, पृ0 632.
8. तिलिस्म लखनऊ 28 अगस्त 1856, इरफान हबीब की कार्ल मार्क्स आन इंडिया की भूमिका, मार्क्स परसेप्शन आफ इंडिया पृ0 XIX.
9. शेरिंग नामक मिशनरी का कथन, उद्धृत, सय्यद अतहर अब्बास रिजवी, फ्रीडम स्ट्रगल इन उत्तर प्रदेश खण्ड–1, पृ0 287, लखनऊ 1957 (इसके पश्चात रिजवी के रूप में उद्धृत)।
10. रिजवी, फ्रीडम स्ट्रगल इन यू0पी0 खंड II पृ0 603–604.
11. पूर्वोक्त।
12. पूर्वोक्त।

13. रिजवी फ्रीडम स्ट्रगल इन यू0पी0 खंड । पृ0 483–69.
14. जीवन लाल, टू नैरेटिक्स ....अनु0 मेटकाफ पृ0 8.
15. जहीर देहलवी, पृ0 77–79.
16. पूर्वोक्त पृ0 96–98.
17. पूर्वोक्त पृ0 125.
18. देहली उर्दू अखबार 24 मई 1857.
19. जहीर देहलवी, पूर्वोधृत, पृ0 103.
20. जीवनलाल, पूर्वोधृत, पृ0 104, 106.
21. जहीर देहलवी, पूर्वोधृत, पृ0 125.
22. पूर्वोक्त पृ0 140, 141.
23. पूर्वोक्त।
24. जीवनलाल, पूर्वोधृत, पृ0 133–34 (अनु0मेटकाफ)
25. पूर्वोक्त।
26. पूर्वोक्त, स्पीयर इसका अलग विवरण देता है। उसके अनुसार, "बख्त खान दीवान–ए–खास ने बादशाह की कुर्सी के पास आया।" (ट्वाईलाइट आफ द मुगल्स), लन्दन पृ0 214.
27. केई, खंड 2 पृ0 64.
28. केई, खंड 2 पृ0 ।
29. के0के0 दत्ता, बायोग्राफी आफ कुँवर सिंह ऐंड अमर सिंह, पटना 1957 पृ0 13 की पाद टिप्पणी।

*****